## Chapter तीन

# सुकन्या तथा च्यवन मुनि का विवाह

इस अध्याय में मनु के अन्य पुत्र शर्याति के वंश का वर्णन है और इसमें सुकन्या तथा रेवती का भी उल्लेख हुआ है।

देवज्ञ शर्याति ने अंगिरसों के यज्ञ के दूसरे दिन सम्पन्न होने वाले अनुष्ठानों के विषय में आदेश दिया। एक दिन शर्याति अपनी पुत्री सुकन्या सहित च्यवन मुनि के आश्रम में गये। वहाँ सुकन्या ने एक बाँबी के भीतर दो चमकीली वस्तुएँ देखीं और दैववशात् उसने उन दोनों वस्तुओं को छेद दिया। ज्यों ही उसने ऐसा किया कि उस छेद से खून चूने लगा। फलस्वरूप राजा शर्याति तथा उनके संगियों को कब्ज तथा मूत्रबन्द होने लगा। जब राजा ने पूछा कि अकस्मात् परिस्थिति कैसे बदल गई तो पता चला कि इस दुर्भाग्य का कारण सुकन्या थी। तब सबों ने च्यवन मुनि को प्रसन्न करने के लिए स्तुति की और देवज्ञ शर्याति ने अपनी पुत्री उस वृद्ध पुरुष च्यवन मुनि को सौंप दी।

एक बार स्वर्ग के वैद्य अश्विनीकुमार बन्धु च्यवन मुनि के पास गये तो मुनि ने उनसे अपना तारुण्य वापस माँगा। ये दोनों वैद्य च्यवन मुनि को एक विशेष सरोवर के पास ले गये जहाँ उन्हें नहलवाया जिससे उन्हें तारुण्य फिर से वापस मिल गया। इसके बाद सुकन्या अपने पति को नहीं पहचान पाई। अतएव वह अश्विनीकुमारों की शरण में गई जो उसके सतीत्व से परम प्रसन्न हुए और उन्होंने उसे पुन: उसके पति से मिला दिया। तब च्यवन मुनि ने राजा शर्याति को सोमयज्ञ कराने में लगा दिया और अश्विनीकुमारों को सोमरस पीने का अवसर प्रदान किया। इस पर स्वर्ग का राजा इन्द्र अत्यन्त कुपित हुआ, किन्तु वह शर्याति को कोई क्षति न पहुँचा पाया। तभी से अश्विनीकुमार वैद्यों को सोमरस में भाग मिलने लगा।

बाद में शर्याति के तीन पुत्र हुए जिनके नाम थे—उत्तानबर्हि, आनर्त तथा भूरिषेण। आनर्त के एक ही पुत्र हुआ जिसका नाम रेवत था। रेवत के सौ पुत्र हुए जिनमें से ककुद्मी ज्येष्ठ था। ककुद्मी को ब्रह्माजी ने सलाह दी कि वह अपनी सुन्दर पुत्री रेवती को बलदेव को अर्पित कर दे जो विष्णुतत्त्व की कोटि में आते हैं। तत्पश्चात् ककुद्मी ने गृहस्थ जीवन से वैराग्य ले लिया और वह तपस्या करने के लिए बदरिकाश्रम के जंगल में चला गया।

श्रीशुक उवाच
शर्यातिर्मानवो राजा ब्रह्मिष्ठः सम्बभूव ह ।
यो वा अङ्गिरसां सत्रे द्वितीयमहरूचिवान् ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; शर्यातिः—शर्याति नामक राजा; मानवः—मनु का पुत्र; राजा—शासक; ब्रह्मिष्ठः—वैदिक ज्ञान से पूर्णतः भिज्ञ; सम्बभूव ह—वह बना; यः—जो; वा—अथवा; अङ्गिरसाम्—अंगिरा के वंशजों की; सत्रे—यज्ञशाला में; द्वितीयम् अहः—दूसरे दिन सम्पन्न होने वाले उत्सव; ऊचिवान्—कह सुनाया।.

श्री शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा : हे राजा, मनु का दूसरा पुत्र राजा शर्याति वैदिक ज्ञान में पारंगत था। उसने अंगिरावंशियों द्वारा सम्पन्न होने वाले यज्ञ के दूसरे दिन के उत्सवों के विषय में आदेश दिए।

सुकन्या नाम तस्यासीत्कन्या कमललोचना ।
तया सार्धं वनगतो ह्यगमच्च्यवनाश्रमम् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

सुकन्या—सुकन्या; नाम—नामक; तस्य—उसकी ( शर्याति की ); आसीत्—थी; कन्या—पुत्री; कमल-लोचना—कमल जैसे नेत्रों वाली; तया सार्धम्—उसके साथ; वन-गतः—जंगल में गया हुआ; हि—निस्सन्देह; अगमत्—वह गया; च्यवन-आश्रमम्—च्यवन मुनि के आश्रम में।.

शर्याति के सुकन्या नामक एक सुन्दर कमलनेत्री कन्या थी जिसके साथ वे जंगल में च्यवन मुनि के आश्रम को देखने गये।

सा सखीभिः परिवृता विचिन्वन्त्यङ्घ्रिपान्वने ।
वल्मीकरन्ध्रे ददृशे खद्योते इव ज्योतिषी ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

सा—वह सुकन्या; सखीभिः—अपनी सहेलियों से; परिवृता—घिरी हुई; विचिन्वन्ती—चुनती हुई; अङ्घ्रिपान्—वृक्षों से फल तथा फूल; वने—जंगल में; वल्मीक-रन्ध्रे—बाँबी के छेद में; ददृशे—देखा; खद्योते—दो जुगनू; इव—सदृश; ज्योतिषी—दो चमकीली वस्तुएँ।.

जब वह सुकन्या जंगल में अपनी सहेलियों से घिरी हुई, वृक्षों से विविध प्रकार के फल एकत्र कर रही थी तो उसने बाँबी के छेद में दो जुगनू जैसी चमकीली वस्तुएँ देखीं।

ते दैवचोदिता बाला ज्योतिषी कण्टकेन वै ।
अविध्यन्मुग्धभावेन सुस्रावासृक्ततो बहिः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

ते—उन दोनों; दैव-चोदिता—मानो विधाता द्वारा प्रेरित; बाला—तरुणी ने; ज्योतिषी—बाँबी के भीतर दो जुगुनुओं को; कण्टकेन—काँटे से; वै—निस्सन्देह; अविध्यत्—छेद दिया; मुग्ध-भावेन—बिना जाने; सुस्राव—बाहर निकल आया; असृक्—रक्त; ततः—वहाँ से; बहिः—बाहर।

मानो विधाता से प्रेरित होकर उस तरुणी ने बिना जाने उन दोनों जुगुनुओं को एक काँटे से छेद दिया जिससे उनमें से रक्त फूटकर बाहर आने लगा।

शकृन्मूत्रनिरोधोऽभूत्सैनिकानां च तत्क्षणात् ।
राजर्षिस्तमुपालक्ष्य पुरुषान्विस्मितोऽब्रवीत् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

शकृत्—मल का; मूत्र—तथा मूत्र का; निरोधः—अवरोध; अभूत्—हो गया; सैनिकानाम्—सारे सिपाहियों का; च—तथा; तत्-क्षणात्—तुरन्त; राजर्षिः—राजा; तम् उपालक्ष्य—उस घटना को देखकर; पुरुषान्—अपने आदमियों से; विस्मितः—आश्चर्यचकित होकर; अब्रवीत्—बोला।

उसके बाद ही शर्याति के सारे सैनिकों को तुरन्त ही मल-मूत्र में अवरोध होने लगा। यह देखकर शर्याति बड़े अचम्भे में आकर अपने संगियों से बोला।

अप्यभद्रं न युष्माभिर्भार्गवस्य विचेष्टितम् ।
व्यक्तं केनापि नस्तस्य कृतमाश्रमदूषणम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

अपि—ओह; अभद्रम्—कुछ अशुभ; नः—हम लोगों में से; युष्माभिः—तुम लोगों द्वारा; भार्गवस्य—च्यवन मुनि का; विचेष्टितम्—प्रयत्न किया गया है; व्यक्तम्—अब यह स्पष्ट है; केन अपि—किसी के द्वारा; नः—हमारा; तस्य—उसका ( च्यवन मुनि का ); कृतम्—किया गया है; आश्रम-दूषणम्—आश्रम का प्रदूषण।

यह कितनी विचित्र बात है कि हममें से किसी ने भृगुपुत्र च्यवन मुनि का कुछ अहित करने का प्रयास किया है। निश्चय ही, ऐसा लगता है कि हममें से किसी ने इस आश्रम को अपवित्र कर दिया है।

सुकन्या प्राह पितरं भीता किञ्चित्कृतं मया ।
द्वे ज्योतिषी अजानन्त्या निर्भिन्ने कण्टकेन वै ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

सुकन्या—सुकन्या ने; प्राह—कहा; पितरम्—अपने पिता से; भीता—डरी हुई; किञ्चित्—कुछ; कृतम्—किया गया है; मया—मेरे द्वारा; द्वे—दो; ज्योतिषी—चमकती वस्तुएँ; अजानन्त्या—अज्ञान के कारण; निर्भिन्ने—छेद दी गईं; कण्टकेन—काँटे से; वै—निस्सन्देह।

अत्यन्त भयभीत सुकन्या ने अपने पिता से कहा : मैंने कुछ गलती की है क्योंकि मैंने अज्ञानवश

**इन दो चमकीली वस्तुओं को काँटे से छेद दिया है।**

**दुहितुस्तद्वचः श्रुत्वा शर्यातिर्जातसाध्वसः ।**
**मुनिं प्रसादयामास वल्मीकान्तर्हितं शनैः ॥ ८ ॥**

शब्दार्थ

दुहितुः—अपनी पुत्री का; तत् वचः—वह कथन; श्रुत्वा—सुनकर; शर्यातिः—राजा शर्याति ने; जात-साध्वसः—भयभीत होकर; मुनिम्—च्यवन मुनि को; प्रसादयाम् आस—शांत करने का प्रयास किया; वल्मीक-अन्तर्हितम्—बाँबी के भीतर बैठे; शनैः—धीरे-धीरे।

**अपनी पुत्री से यह सुनकर राजा शर्याति अत्यधिक डर गये। उन्होंने अनेक प्रकार से च्यवन मुनि को शांत करने का प्रयत्न किया क्योंकि वे ही उस बाँबी के छेद के भीतर बैठे थे।**

**तदभिप्रायमाज्ञाय प्रादादुहितरं मुनेः ।**
**कृच्छ्रान्मुक्तस्तमामन्त्र्य पुरं प्रायात्समाहितः ॥ ९ ॥**

शब्दार्थ

तत्—च्यवन मुनि का; अभिप्रायम्—प्रयोजन; आज्ञाय—समझकर; प्रादात्—प्रदान कर दिया; दुहितरम्—अपनी पुत्री; मुनेः—च्यवन मुनि को; कृच्छ्रात्—बड़ी कठिनाई से; मुक्तः—मुक्त बनाया; तम्—मुनि को; आमन्त्र्य—अनुमति लेकर; पुरम्—अपने स्थान को; प्रायात्—चला गया; समाहितः—अत्यधिक विचारमग्न।

**अत्यन्त विचारमग्न होकर और च्यवन मुनि के प्रयोजन को समझकर राजा शर्याति ने मुनि को अपनी कन्या दान में दे दी। इस प्रकार बड़ी मुश्किल से संकट से मुक्त होकर उसने च्यवन मुनि से अनुमति ली और वह घर लौट गया।**

**तात्पर्य :** राजा ने अपनी लड़की से सारी बातें सुनकर च्यवन मुनि को यह अवश्य बतलाया होगा कि किस तरह उसकी पुत्री ने अनजाने ऐसा अपराध किया। किन्तु मुनि ने राजा से पूछा कि उसकी पुत्री विवाहिता है या नहीं। इस तरह राजा ने मुनि का अभिप्राय समझकर ( *तदभिप्रायम् आज्ञाय* ), तुरन्त ही अपनी पुत्री को दान में दे दिया और वह शापित होने के संकट से बच गया। तब मुनि की आज्ञा से राजा घर लौट गया।

**सुकन्या च्यवनं प्राप्य पतिं परमकोपनम् ।**
**प्रीणयामास चित्तज्ञा अप्रमत्तानुवृत्तिभिः ॥ १० ॥**

शब्दार्थ

सुकन्या—राजा शर्याति की पुत्री सुकन्या ने; च्यवनम्—च्यवन मुनि को; प्राप्य—पाकर; पतिम्—पति रूप में; परम-कोपनम्—जो सदैव अत्यन्त क्रुद्ध रहता था; प्रीणयाम् आस—उसको प्रसन्न किया; चित्त-ज्ञा—अपने पति के मन की बात जानने वाली; अप्रमत्ता अनुवृत्तिभिः—घबराए बिना सेवा करके।

**च्यवन मुनि अत्यन्त क्रोधी थे, किन्तु क्योंकि सुकन्या ने उन्हें पति रूप में प्राप्त किया था, अतः उसने सावधानी से उनके मनोनुकूल व्यवहार किया। उसने बिना घबराए उनकी सेवा की।**

**तात्पर्य :** यह पति तथा पत्नी के मध्य सम्बन्ध का द्योतक है। च्यवन मुनि जैसा महापुरुष सदैव श्रेष्ठ पद पर बना रहना चाहता है। ऐसा व्यक्ति किसी के आगे घुटने नहीं टेक सकता। अतएव च्यवन मुनि का स्वभाव क्रोधी था। उनकी पत्नी सुकन्या उनकी मनोवृत्ति को समझ गई थी अतएव उसने तदनुसार बर्ताव करना प्रारम्भ किया। यदि कोई पत्नी अपने पति के साथ सुख से रहना चाहती है तो उसे अपने पति के मनोभाव समझने का प्रयास करना चाहिए और उसे प्रसन्न करना चाहिए। यह स्त्री की विजय है। यहाँ तक कि श्रीकृष्ण द्वारा अपनी विभिन्न रानियों के साथ किये जाने वाले बर्ताव में भी इसे देखा जा सकता है कि यद्यपि ये रानियाँ बड़े-बड़े राजाओं की पुत्रियाँ थीं, किन्तु उन्होंने भगवान् कृष्ण के समक्ष अपने आपको दासी के रूप में प्रस्तुत किया। कोई स्त्री कितनी भी महान् क्यों न हो उसे अपने पति के समक्ष इसी तरह प्रस्तुत होना चाहिए अर्थात् उसे अपने पति के आदेशों का पालन करने के लिए तथा सभी परिस्थितियों में उसे प्रसन्न रखने के लिए तैयार रहना चाहिए। तभी उसका जीवन सफल हो पाएगा। यदि पत्नी भी पति के समान क्रोधी बन जाय तो उनका गृहस्थ-जीवन अवश्य ही अस्त-व्यस्त हो जायेगा या अंत में पूर्णतया ध्वस्त हो जायेगा। आधुनिक काल की पत्नी विनयशील नहीं है इसीलिए छोटी से छोटी घटना होने पर गृहस्थ-जीवन भंग हो जाता है। पत्नी या पति दोनों में से कोई भी विवाह-विच्छेद के नियमों का लाभ उठा सकता है। किन्तु वैदिक नियमों में विवाह-विच्छेद की कोई व्यवस्था नहीं है और पत्नी को पति की इच्छा के अनुसार विनीत होने की शिक्षा दी जानी चाहिए। पाश्चात्य लोगों का कहना है कि पत्नी के लिए यह दास-प्रवृत्ति है, किन्तु वास्तव में ऐसा है नहीं। यह तो स्त्री की निपुणता है जिससे वह अपने कितने ही क्रोधी या नृशंस पति के हृदय पर विजय पा सकती है। यहाँ पर हम स्पष्ट देखते हैं कि यद्यपि च्यवन मुनि तरुण नहीं थे और सुकन्या के पितामह होने योग्य तथा अत्यधिक क्रोधी थे, जब कि सुकन्या एक राजा की सुन्दर तरुण कन्या थी तो भी उसने अपने बूढ़े पति को आत्म-समर्पण करके उसे सभी प्रकार से प्रसन्न करने का प्रयत्न किया। इस प्रकार वह आज्ञाकारिणी एवं साध्वी पत्नी थी।

**कस्यचित्त्वथ कालस्य नासत्यावाश्रमागतौ ।**
**तौ पूजयित्वा प्रोवाच वयो मे दत्तमीश्वरौ ॥ ११ ॥**

शब्दार्थ

कस्यचित्—कुछ ( समय ) बाद; तु—लेकिन; अथ—इस प्रकार; कालस्य—समय के बीतने पर; नासत्यौ—दोनों अश्विनीकुमार; आश्रम—च्यवन मुनि के स्थान पर; आगतौ—पहुँचे; तौ—उन दोनों को; पूजयित्वा—सत्कार तथा नमस्कार करके; प्रोवाच—कहा; वयः—तारुण्य; मे—मुझको; दत्तम्—कृपा करके दे दो; ईश्वरौ—क्योंकि तुम दोनों ऐसा करने में समर्थ हो।.

**कुछ काल बीतने के बाद दोनों अश्विनीकुमार जो स्वर्गलोक के वैद्य थे, च्यवन मुनि के आश्रम आये। उनका सत्कार करने के बाद च्यवन मुनि ने उनसे यौवन प्रदान करने के लिए प्रार्थना की क्योंकि वे ऐसा करने में सक्षम थे।**

**तात्पर्य :** अश्विनीकुमार जैसे स्वर्ग के वैद्य किसी को भी, चाहे वह वृद्ध क्यों न हो, जवानी दे सकते थे। निस्सन्देह, बड़े-बड़े योगी अपनी योगशक्ति से शव में भी जीवन फूँक सकते हैं यदि शरीर की संरचना बिगड़ी न हो। शुक्राचार्य द्वारा बलि महाराज के सैनिकों के उपचार के प्रसंग में हम इसकी व्याख्या कर चुके हैं। यद्यपि आधुनिक चिकित्साशास्त्र शव को जीवित करने या वृद्ध शरीर में जवानी लाने में असमर्थ है, किन्तु इस श्लोकों से पता चलता है कि यदि कोई वैदिक शास्त्र से ज्ञान प्राप्त कर ले तो ऐसा उपचार सम्भव है। दोनों अश्विनीकुमार धन्वन्तरि के ही समान आयुर्वेद में पटु थे। यदि भौतिक विज्ञान की प्रत्येक शाखा में पूर्णता प्राप्त की जानी है तो इसे प्राप्त करने के लिए वैदिक साहित्य का अवलोकन करना चाहिए। किन्तु सबसे बड़ी पूर्णता (सिद्धि) तो भगवान् का भक्त बनना है। इस पूर्णता-प्राप्ति के लिए *श्रीमद्भागवत* का अवलोकन करना चाहिए जो वैदिक कल्पतरु का पक्व फल माना जाता है ( *निगमकल्पतरोर्गलितं फलम्* )।

**ग्रहं ग्रहीष्ये सोमस्य यज्ञे वामप्यसोमपोः ।**
**क्रियतां मे वयोरूपं प्रमदानां यदीप्सितम् ॥ १२ ॥**

शब्दार्थ

ग्रहम्—पूर्ण पात्र; ग्रहीष्ये—मैं दूँगा; सोमस्य—सोमरस का; यज्ञे—यज्ञ में; वाम्—तुम दोनों का; अपि—यद्यपि; असोम-पोः—तुम दोनों का, जो सोमरस पीने के अधिकारी नहीं हो; क्रियताम्—पूरा करो; मे—मेरा; वयः—यौवन; रूपम्—नवयुवक का सौन्दर्य; प्रमदानाम्—स्त्री-वर्ग का; यत्—जो; ईप्सितम्—अभीष्ट है।.

**च्यवन मुनि ने कहा : यद्यपि तुम दोनों यज्ञ में सोमरस पीने के पात्र नहीं हो, किन्तु मैं वचन देता हूँ कि मैं तुम्हें सोमरस का पूरा बर्तन भर कर दूँगा। कृपा करके मेरे लिए सौन्दर्य तथा तारुण्य की**

**व्यवस्था करो क्योंकि तरुणी स्त्रियों को ये आकर्षक लगते हैं।**

**बाढमित्यूचतुर्विप्रमभिनन्द्य भिषक्तमौ ।**
**निमज्जतां भवानस्मिन्ह्रदे सिद्धविनिर्मिते ॥ १३॥**

शब्दार्थ

बाढम्—हाँ, हम ऐसा करेंगे; इति—इस प्रकार; ऊचतु:—दोनों ने उत्तर दिया, च्यवन मुनि का प्रस्ताव स्वीकार किया; विप्रम्—ब्राह्मण ( च्यवन मुनि ) को; अभिनन्द्य—बधाई देकर; भिषक्-तमौ—दोनों महान् वैद्य अश्विनीकुमार; निमज्जताम्—डुबकी लगाइये; भवान्—आप; अस्मिन्—इस; ह्रदे—झील में; सिद्ध-विनिर्मिते—सभी प्रकार की सिद्धियों के लिए विशेषत: बनाई गई।.

**उन महान् वैद्य अश्विनीकुमारों ने च्यवन मुनि के प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया। उन्होंने उस ब्राह्मण से कहा ''आप इस सिद्धिदायक झील में गोता लगाइये। ( जो इस झील में नहाता है उसकी कामनाएँ पूरी होती हैं )।**

**इत्युक्तो जरया ग्रस्तदेहो धमनिसन्तत: ।**
**ह्रदं प्रवेशितोऽश्विभ्यां वलीपलितविग्रह: ॥ १४॥**

शब्दार्थ

इति उक्त:—इस प्रकार कहे जाने पर; जरया—वृद्धावस्था तथा अशक्तता के कारण; ग्रस्त-देह:—रुग्ण देह; धमनि-सन्तत:—जिसकी धमनियाँ शरीर भर में झलक रही थीं; ह्रदम्—झील में; प्रवेशित:—प्रविष्ट हुए; अश्विभ्याम्—अश्विनीकुमारों की सहायता से; वली-पलित-विग्रह:—जिसके शरीर की चमड़ी झूल रही थी तथा बाल सफेद थे।.

**यह कहकर अश्विनीकुमारों ने च्यवन मुनि को पकड़ा जो वृद्ध थे और जिनके रुग्ण शरीर की चमड़ी झूल रही थी, बाल सफेद थे तथा सारे शरीर में नसें दिख रही थीं और वे तीनों उस झील में घुस गये।**

**तात्पर्य :** च्यवन मुनि इतने वृद्ध थे कि वे अकेले झील में नहीं घुस सकते थे। अत: अश्विनीकुमारों ने उनका शरीर पकड़ा और वे तीनों झील में घुस गये।

**पुरुषास्त्रय उत्तस्थुरपीव्या वनिताप्रिया: ।**
**पद्मस्त्रज: कुण्डलिनस्तुल्यरूपा: सुवासस: ॥ १५॥**

शब्दार्थ

पुरुषा:—मनुष्य; त्रय:—तीन; उत्तस्थु:—( झील से ) ऊपर निकल आये; अपीव्या:—अत्यन्त सुन्दर; वनिता-प्रिया:—स्त्रियों को आकर्षक लगने वाला पुरुष; पद्म-स्त्रज:—कमल की मालाओं से अलंकृत; कुण्डलिन:—कुण्डल पहिने; तुल्य-रूपा:—समान स्वरूप वाले; सु-वासस:—सुन्दर वस्त्र पहने।.

**तत्पश्चात् झील से तीन अत्यन्त सुन्दर स्वरूप वाले व्यक्ति ऊपर उठे। वे अच्छे वस्त्र धारण किये थे**

**और कुण्डलों तथा कमल की मालाओं से विभूषित तीनों ही समान सुन्दरता वाले थे।**

**तान्निरीक्ष्य वरारोहा सरूपान्सूर्यवर्चसः ।**
**अजानती पतिं साध्वी अश्विनौ शरणं ययौ ॥ १६ ॥**

शब्दार्थ

तान्—उनको; निरीक्ष्य—देखकर; वर-आरोहा—सुन्दरी सुकन्या; स-रूपान्—समान सुन्दरता वाले; सूर्य-वर्चसः—सूर्य के समान तेजस्वी; अजानती—न जानती हुई; पतिम्—अपने पति को; साध्वी—उस सती स्त्री ने; अश्विनौ—अश्विनीकुमारों की; शरणम्—शरण; ययौ—ग्रहण की।.

**साध्वी एवं परम सुन्दरी सुकन्या अपने पति एवं उन दोनों अश्विनीकुमारों में अन्तर न कर पाई क्योंकि वे समान रूप से सुन्दर थे। अतएव अपने असली पति को पहचान पाने में असमर्थ होने के कारण उसने अश्विनीकुमारों की शरण ग्रहण की।**

**तात्पर्य :** सुकन्या उन तीनों में किसी को भी अपना पति चुन सकती थी क्योंकि उनमें अन्तर कर पाना कठिन था, किन्तु सती होने के कारण उसने अश्विनीकुमारों की शरण ग्रहण की जिससे वे उसका असली पति बतला सकें। सती स्त्री अपने पति के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष को कभी भी स्वीकार नहीं करेगी, भले ही कोई उसी के समान सुन्दर तथा योग्य क्यों न हो।

**दर्शयित्वा पतिं तस्यै पातिव्रत्येन तोषितौ ।**
**ऋषिमामन्त्र्य ययतुर्विमानेन त्रिविष्टपम् ॥ १७ ॥**

शब्दार्थ

दर्शयित्वा—दिखलाने के बाद; पतिम्—पति; तस्यै—सुकन्या को; पाति-व्रत्येन—उसके पातिव्रत्य से; तोषितौ—उसपर प्रसन्न होकर; ऋषिम्—च्यवन मुनि को; आमन्त्र्य—उसकी अनुमति लेकर; ययतुः—चले गये; विमानेन—अपने विमान से; त्रिविष्टपम्—स्वर्गलोक को।.

**दोनों अश्विनीकुमार सुकन्या के सतीत्व एवं निष्ठा को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। अतः उन्होंने उसे उसके पति च्यवन मुनि को दिखलाया और फिर उनसे अनुमति लेकर वे अपने विमान से स्वर्गलोक को वापस लौट गये।**

**यक्ष्यमाणोऽथ शर्यातिश्च्यवनस्याश्रमं गतः ।**
**ददर्श दुहितुः पार्श्वे पुरुषं सूर्यवर्चसम् ॥ १८ ॥**

शब्दार्थ

यक्ष्यमाणः—यज्ञ करने की इच्छा से; अथ—इस प्रकार; शर्यातिः—शर्याति; च्यवनस्य—च्यवन मुनि के; आश्रमम्—आवास तक; गतः—जाकर; ददर्श—देखा; दुहितुः—अपनी कन्या के; पार्श्वे—बगल में; पुरुषम्—पुरुष को; सूर्य-वर्चसम्—सूर्य के समान सुन्दर तथा तेजवान।

**तत्पश्चात् यज्ञ सम्पन्न करने की इच्छा से राजा शर्याति च्यवन मुनि के आवास में गये। वहाँ उन्होंने अपनी पुत्री के बगल में सूर्य के समान एक तेजस्वी सुन्दर तरुण पुरुष को देखा।**

**राजा दुहितरं प्राह कृतपादाभिवन्दनाम् ।**
**आशिषश्चाप्रयुञ्जानो नातिप्रीतिमना इव ॥ १९ ॥**

शब्दार्थ

राजा—राजा ( शर्याति ) ने; दुहितरम्—अपनी पुत्री से; प्राह—कहा; कृत-पाद-अभिवन्दनाम्—जो अपने पिता को पहले ही सादर नमस्कार कर चुकी थी; आशिषः—आशीर्वाद; च—तथा; अप्रयुञ्जानः—अपनी पुत्री को दिये बिना; न—नहीं; अतिप्रीति-मनाः—अत्यधिक प्रसन्न; इव—सदृश।

**राजा की पुत्री ने पिता के चरणों की वन्दना की, किन्तु राजा उसे आशीष देने की बजाय उससे अत्यधिक अप्रसन्न प्रतीत हुआ और उससे इस प्रकार बोला।**

**चिकीर्षितं ते किमिदं पतिस्त्वया**
**प्रलम्भितो लोकनमस्कृतो मुनिः ।**
**यत्त्वं जराग्रस्तमसत्यसम्मतं**
**विहाय जारं भजसेऽमुमध्वगम् ॥ २० ॥**

शब्दार्थ

चिकीर्षितम्—तुम जो करना चाहती हो; ते—तुम्हारा; किम् इदम्—यह क्या है; पतिः—अपना पति; त्वया—तुम्हारे द्वारा; प्रलम्भितः—ठगा गया है; लोक-नमस्कृतः—जिसका सभी लोग आदर करते हैं; मुनिः—महान् साधु; यत्—क्योंकि; त्वम्—तुम; जरा-ग्रस्तम्—अत्यन्त वृद्ध एवं अशक्त; असति—हे दुष्ट लड़की; असम्मतम्—अनाकर्षक; विहाय—छोड़कर; जारम्—परपति, धृष्ट; भजसे—स्वीकार किया है; अमुम्—इस व्यक्ति को; अध्वगम्—जो भिखारी के तुल्य है।

**हे दुष्ट लड़की, तुमने यह क्या कर दिया? तुमने अपने अत्यन्त सम्माननीय पति को धोखा दिया है क्योंकि मैं देख रहा हूँ कि उसके वृद्ध, रोगग्रस्त तथा अनाकर्षक होने के कारण तुमने उसका साथ छोड़कर इस तरुण पुरुष को अपना पति बनाना चाहा है जो भिक्षुक जैसा प्रतीत होता है।**

**तात्पर्य :** इससे वैदिक संस्कृति की महत्ता झलकती है। परिस्थितिवश सुकन्या को ऐसा पति दिया गया था जो उसकी तुलना में वृद्ध था। चूँकि च्यवन मुनि रुग्ण एवं अति वृद्ध थे अतएव वे निश्चित रूप से राजा शर्याति की सुन्दर पुत्री के अनुरूप न थे। फिर भी उसके पिता चाहते थे कि वह अपने पति की आज्ञाकारिणी बनी रहे। अतएव जब पिता ने सहसा देखा कि उसकी पुत्री ने किसी अन्य को पति बना लिया है, यद्यपि

वह तरुण तथा सुन्दर था तो भी उसने तुरन्त ही उसे *असती* कहकर दुत्कारा क्योंकि उसने यह कल्पना कर ली कि उसकी पुत्री ने अपने पति के रहते किसी अन्य को पति बना लिया है। वैदिक संस्कृति के अनुसार यदि कोई तरुणी किसी वृद्ध को भी ब्याह दी जाय तो उसे आदरपूर्वक उसकी सेवा करनी चाहिए। यही सतीत्व है। ऐसा नहीं है कि यदि वह अपने पति को नहीं चाहती तो उसे छोड़ दे और दूसरा पति कर ले। यह वैदिक संस्कृति के विरुद्ध है। वैदिक संस्कृति के अनुसार माता-पिता द्वारा कन्या जिसको सौंप दी जाती है उसे ही पति मानकर उसे उसकी आज्ञाकारिणी बनना और सती रहना होता है। इसीलिए राजा शर्याति सुकन्या के बगल में एक तरुण पुरुष को देखकर चकित हो गए।

**कथं मतिस्तेऽवगतान्यथा सतां**
**कुलप्रसूते कुलदूषणं त्विदम् ।**
**बिभर्षि जारं यदपत्रपा कुलं**
**पितुश्च भर्तुश्च नयस्यधस्तमः ॥ २१ ॥**

शब्दार्थ

कथम्—कैसे; मतिः ते—तुम्हारी चेतना; अवगता—नीचे चली गई; अन्यथा—अन्यथा; सताम्—सर्वाधिक पूज्य; कुल-प्रसूते—कुल में उत्पन्न; कुल-दूषणम्—कुलकलंक; तु—लेकिन; इदम्—यह; बिभर्षि—रख रही हो!; जारम्—परपति को; यत्—क्योंकि यह; अपत्रपा—लज्जारहित है; कुलम्—कुल; पितुः—तुम्हारे पिता का; च—तथा; भर्तुः—पति का; च—तथा; नयसि—नीचे ले जा रही हो; अधः तमः—नीचे अंधकार या नरक में।

**हे पूज्य कुल में उत्पन्न मेरी पुत्री, तुमने अपनी चेतना को किस तरह इतना नीचे गिरा दिया है? तुम किस तरह परपति को इतनी निर्लज्जतापूर्वक रख रही हो? इस तरह तुम अपने पिता तथा अपने पति दोनों के कुलों को नरक में धकेल कर बदनाम करोगी।**

**तात्पर्य :** यह बिल्कुल स्पष्ट है कि वैदिक संस्कृति के अनुसार जो स्त्री अपने विवाहित पति के रहते दूसरा पति (जार) स्वीकार करती है वह अपने पिता के कुल तथा पति के कुल को डुबाने वाली मानी जाती है। आज भी इस विषय में ब्राह्मणों, क्षत्रियों तथा वैश्यों के सम्मानित कुलों में वैदिक संस्कृति के नियमों का दृढ़ता से पालन होता है। इस विषय में केवल शूद्र ही पतित होते हैं। वैदिक संस्कृति में ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य कुल की स्त्री के लिए विवाहित पति की उपस्थिति में दूसरा पति स्वीकार करना या विवाह-विच्छेद की माँग करना या परपति को प्रेमी बनाना अमान्य है। अतएव राजा शर्याति च्यवन मुनि के स्वरूप-परिवर्तन की असलियत न जानने के कारण अपनी पुत्री के ऐसे आचरण को देखकर आश्चर्यचकित हुए।

**एवं ब्रुवाणं पितरं स्मयमाना शुचिस्मिता ।**
**उवाच तात जामाता तवैष भृगुनन्दनः ॥ २२॥**

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; ब्रुवाणम्—बातें करते तथा फटकारते हुए; पितरम्—अपने पिता से; स्मयमाना—मुस्काती हुई ( क्योंकि सती थी ); शुचि-स्मिता—हँसती हुई; उवाच—बोली; तात—हे पिता; जामाता—दामाद; तव—तुम्हारा; एषः—यह तरुण; भृगु-नन्दनः—च्यवन मुनि ही हैं ( अन्य कोई नहीं )।

**किन्तु अपने सतीत्व पर गर्वित सुकन्या अपने पिता की डाँट फटकार सुनकर मुस्काने लगी। उसने हँसते हुए कहा ''हे पिता, मेरी बगल में बैठा यह तरुण व्यक्ति आपका असली दामाद, भृगुवंश में उत्पन्न, च्यवन मुनि है।''**

**तात्पर्य :** यद्यपि पिता ने यह सोचकर अपनी पुत्री को फटकारा था कि उसने दूसरा पति स्वीकार कर लिया है, किन्तु पुत्री जान रही थी कि वह पूर्णतया ईमानदार तथा सती है; इसीलिए वह हँस रही थी। जब उसने बताया कि उसका वृद्ध पति च्यवन मुनि ही बदलकर तरुण पुरुष बन गया है तो उसे अपने सतीत्व पर गर्व हुआ और इसीलिए वह अपने पिता से बातें करते समय मुस्करा रही थी।

**शशंस पित्रे तत्सर्वं वयोरूपाभिलम्भनम् ।**
**विस्मितः परमप्रीतस्तनयां परिषस्वजे ॥ २३॥**

शब्दार्थ

शशंस—उसने वर्णन किया; पित्रे—अपने पिता से; तत्—वह; सर्वम्—हर बात; वयः—आयु परिवर्तन का; रूप—तथा सौन्दर्य का; अभिलम्भनम्—किस तरह उपलब्धि मिली ( पति को ); विस्मितः—चकित; परम-प्रीतः—अत्यधिक प्रसन्न; तनयाम्—अपनी पुत्री को; परिषस्वजे—हर्षित होकर गले से लगा लिया।

**तब सुकन्या ने बतलाया कि किस तरह उसके पति को तरुण पुरुष का सुन्दर शरीर प्राप्त हुआ। जब राजा ने इसे सुना तो वह अत्यधिक चकित हुआ और परम हर्षित होकर उसने अपनी प्रिय पुत्री को गले से लगा लिया।**

**सोमेन याजयन्वीरं ग्रहं सोमस्य चाग्रहीत् ।**
**असोमपोरप्यश्विनोश्च्यवनः स्वेन तेजसा ॥ २४॥**

शब्दार्थ

सोमेन—सोम से; याजयन्—यज्ञ कराते हुए; वीरम्—राजा ( शर्याति ) को; ग्रहम्—पूर्ण पात्र; सोमस्य—सोमरस का; च—भी; अग्रहीत्—प्रदान किया; असोम-पोः—जिन्हें सोमरस पीना वर्जित था; अपि—यद्यपि; अश्विनोः—अश्विनीकुमारों का; च्यवनः—च्यवन मुनि; स्वेन—अपने; तेजसा—पराक्रम से।

च्यवन मुनि ने अपने पराक्रम से राजा शर्याति से सोमयज्ञ सम्पन्न कराया। मुनि ने अश्विनीकुमारों को सोमरस का पूरा पात्र प्रदान किया यद्यपि वे इसे पीने के अधिकारी नहीं थे।

हन्तुं तमाददे वज्रं सद्यो मन्युरमर्षितः ।
सवज्रं स्तम्भयामास भुजमिन्द्रस्य भार्गवः ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

हन्तुम्—मारने के लिए; तम्—उस ( च्यवन ) को; आददे—इन्द्र ने धारण किया; वज्रम्—अपना वज्र; सद्यः—तुरन्त; मन्युः—बिना सोचे-विचारे, क्रोध में आकर; अमर्षितः—अत्यन्त उद्विग्न होकर; स-वज्रम्—अपने वज्र से; स्तम्भयाम् आस—निश्चेष्ट कर दिया; भुजम्—बाँह को; इन्द्रस्य—इन्द्र की; भार्गवः—भृगुवंशी च्यवन मुनि।

उद्विग्न एवं क्रुद्ध होने से इन्द्र ने च्यवन मुनि को मार डालना चाहा अतएव उसने बिना सोचे-विचारे अपना वज्र धारण कर लिया। लेकिन च्यवन मुनि ने अपने पराक्रम से इन्द्र की उस बाँह को संज्ञाशून्य कर दिया जिससे उसने वज्र पकड़ रखा था।

अन्वजानंस्ततः सर्वे ग्रहं सोमस्य चाश्विनोः ।
भिषजाविति यत्पूर्वं सोमाहुत्या बहिष्कृतौ ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

अन्वजानन्—उनकी अनुमति से; ततः—तत्पश्चात्; सर्वे—सारे देवता; ग्रहम्—भरा पात्र; सोमस्य—सोमरस का; च—भी; अश्विनोः—अश्विनीकुमारों के; भिषजौ—यद्यपि केवल वैद्य; इति—इस प्रकार; यत्—क्योंकि; पूर्वम्—इसके पहले; सोम-आहुत्या—सोमयज्ञ में भाग देकर; बहिः-कृतौ—निकाला गया।

यद्यपि अश्विनीकुमार मात्र वैद्य थे और इसी कारण से उन्हें यज्ञों में सोमरस-पान से बाहर रखा जाता था, किन्तु देवताओं ने इसके बाद उन्हें सोमरस पीने के लिए अनुमति प्रदान कर दी।

उत्तानबर्हिरानर्तो भूरिषेण इति त्रयः ।
शर्यातेरभवन्पुत्रा आनर्ताद्रेवतोऽभवत् ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

उत्तानबर्हिः—उत्तानबर्हि; आनर्तः—आनर्त; भूरिषेणः—भूरिषेण; इति—इस प्रकार; त्रयः—तीन; शर्यातेः—राजा शर्याति के; अभवन्—उत्पन्न हुए; पुत्राः—पुत्र; आनर्तात्—आनर्त से; रेवतः—रेवत; अभवत्—उत्पन्न हुआ।

राजा शर्याति के उत्तानबर्हि, आनर्त तथा भूरिषेण नामक तीन पुत्र हुए। आनर्त के पुत्र का नाम रेवत था।

**सोऽन्तःसमुद्रे नगरीं विनिर्माय कुशस्थलीम् ।**
**आस्थितोऽभुङ्क्त विषयानानर्तादीनरिन्दम ।**
**तस्य पुत्रशतं जज्ञे ककुद्म्यिज्येष्ठमुत्तमम् ॥ २८ ॥**

शब्दार्थ

सः—रेवत; अन्तः-समुद्रे—समुद्र के नीचे; नगरीम्—शहर; विनिर्माय—बनवाकर; कुशस्थलीम्—कुशस्थली नामक; आस्थितः—वहाँ रहा; अभुङ्क्त—भौतिक सुख का भोग किया; विषयान्—राज्य; आनर्त-आदीन्—आनर्त तथा अन्य; अरिम्-दम—हे शत्रुओं का दमन करने वाले महाराज परीक्षित; तस्य—उसके; पुत्र-शतम्—एक सौ पुत्र; जज्ञे—उत्पन्न हुए; ककुद्मि-ज्येष्ठम्—जिनमें से ककुद्मी ज्येष्ठ था; उत्तमम्—अत्यन्त शक्तिशाली तथा ऐश्वर्यवान्।

**हे शत्रुओं के दमनकर्ता महाराज परीक्षित, इस रेवत ने समुद्र के भीतर कुशस्थली नामक राज्य का निर्माण कराया। वहाँ रहकर उसने आनर्त इत्यादि भूखण्डों पर शासन किया। उसके एक सौ सुन्दर पुत्र थे जिनमें सबसे बड़ा ककुद्मी था।**

**ककुद्मी रेवतीं कन्यां स्वामादाय विभुं गतः ।**
**पुत्र्या वरं परिप्रष्टुं ब्रह्मलोकमपावृतम् ॥ २९ ॥**

शब्दार्थ

ककुद्मी—राजा ककुद्मी; रेवतीम्—रेवती को; कन्याम्—ककुद्मी की पुत्री; स्वाम्—निजी; आदाय—लेकर; विभुम्—ब्रह्मा के समक्ष; गतः—गया; पुत्र्याः—अपनी पुत्री का; वरम्—पति; परिप्रष्टुम्—पूछने के लिए; ब्रह्मलोकम्—ब्रह्मलोक में; अपावृतम्—तीनों गुणों से परे।

**ककुद्मी अपनी पुत्री रेवती को लेकर ब्रह्मा के पास ब्रह्मलोक में गया जो भौतिक प्रकृति के तीनों गुणों से परे है और उसके लिए पति के विषय में पूछताछ की।**

**तात्पर्य :** ऐसा लगता है कि ब्रह्मा का धाम ब्रह्मलोक भी भौतिक प्रकृति के तीनों गुणों से परे है ( *अपावृतम्* )।

**आवर्तमाने गान्धर्वे स्थितोऽलब्धक्षणः क्षणम् ।**
**तदन्त आद्यमानम्य स्वाभिप्रायं न्यवेदयत् ॥ ३० ॥**

शब्दार्थ

आवर्तमाने—लगा रहने के कारण; गान्धर्वे—गन्धर्वों से गाने सुनने में; स्थितः—स्थित; अलब्ध-क्षणः—बात करने के लिए समय न था; क्षणम्—क्षणभर के लिए भी; तत्-अन्ते—समाप्त होने पर; आद्यम्—ब्रह्माण्ड के आदि गुरु ( ब्रह्माजी ) को; आनम्य—नमस्कार करके; स्व-अभिप्रायम्—अपनी निजी इच्छा; न्यवेदयत्—ककुद्मी ने निवेदन किया।

**जब ककुद्मी वहाँ पहुँचा तो ब्रह्माजी गन्धर्वों का संगीत सुनने में व्यस्त थे और उन्हें बात करने की तनिक भी फुरसत न थी। अतएव ककुद्मी प्रतीक्षा करता रहा और संगीत समाप्त होने पर उसने ब्रह्माजी को नमस्कार करके अपनी चिरकालीन इच्छा व्यक्त की।**

**तच्छ्रुत्वा भगवान्ब्रह्मा प्रहस्य तमुवाच ह ।**
**अहो राजन्निरुद्धास्ते कालेन हृदि ये कृताः ॥ ३१ ॥**

शब्दार्थ

तत्—उसे; श्रुत्वा—सुनकर; भगवान्—अत्यन्त शक्तिशाली; ब्रह्मा—ब्रह्माजी ने; प्रहस्य—हँसकर; तम्—ककुद्मी राजा से; उवाच ह—कहा; अहो—ओह; राजन्—हे राजा; निरुद्धाः—सभी चले गये; ते—वे; कालेन—कालक्रम से; हृदि—हृदय में; ये—वे सभी; कृताः—जिन्होंने तुम्हारे दामाद के रूप में स्वीकृति दे दी है।.

**उसके वचन सुनकर शक्तिशाली ब्रह्माजी जोर से हँसे और ककुद्मी से बोले: हे राजा, तुमने अपने हृदय में जिन लोगों को अपना दामाद बनाने का निश्चय किया है वे कालक्रम से मर चुके हैं।**

**तत्पुत्रपौत्रनप्तृणां गोत्राणि च न शृण्महे ।**
**कालोऽभियातस्त्रिणवचतुर्युगविकल्पितः ॥ ३२ ॥**

शब्दार्थ

तत्—वहाँ; पुत्र—पुत्रों का; पौत्र—पौत्रों का; नप्तृणाम्—तथा वंशजों का; गोत्राणि—गोत्र; च—भी; न—नहीं; शृण्महे—हम सुनते हैं; कालः—काल; अभियातः—चले गये; त्रि—तीन; नव—नौ; चतुर्-युग—चारों युग ( सत्य, त्रेता, द्वापर तथा कलि ); विकल्पितः—इस प्रकार मापा गया।.

**सत्ताईस चतुर्युग बीत चुके हैं। तुमने जिन लोगों को रेवती का पति बनाना चाहा होगा वे अब सब चले गये हैं और उनके पुत्र, पौत्र तथा अन्य वंशज भी नहीं रहे हैं। अब तुम्हें उनके नाम भी नहीं सुनाई पड़ेंगे।**

**तात्पर्य :** ब्रह्माजी के एक दिन में चौदह मनु या एक हजार महायुग बीत जाते हैं। ब्रह्माजी ने राजा ककुद्मी को सूचित किया कि पहले ही सत्ताईस महायुग बीत चुके हैं जिनमें से प्रत्येक में चार युग—सत्य, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग—होते हैं। उन युगों में उत्पन्न सारे राजा तथा महापुरुष पहले ही विस्मृत हो चुके थे। भूत, वर्तमान तथा भविष्य से होकर गतिशील काल की यही रीति है।

**तद्गच्छ देवदेवांशो बलदेवो महाबलः ।**
**कन्यारत्नमिदं राजन्नररत्नाय देहि भोः ॥ ३३ ॥**

शब्दार्थ

तत्—इसलिए; गच्छ—जाओ; देव-देव-अंशः—जिनके स्वांश विष्णु हैं; बलदेवः—बलदेव; महा-बलः—अत्यन्त शक्तिशाली; कन्या-रत्नम्—अपनी सुन्दर पुत्री को; इदम्—इस; राजन्—हे राजा; नर-रत्नाय—भगवान् को, जो सदैव तरुण रहते हैं; देहि—दो ( दान में ); भोः—हे राजा।.

**हे राजा, तुम यहाँ से जाओ और अपनी पुत्री भगवान् बलदेव को अर्पित करो जो अभी भी**

उपस्थित हैं। वे अत्यन्त शक्तिशाली हैं। निस्सन्देह, वे भगवान् हैं और उनके स्वांश विष्णु हैं। उन्हें दान में दिये जाने के लिए तुम्हारी पुत्री सर्वथा उपयुक्त है।

भुवो भारावताराय भगवान्भूतभावनः ।
अवतीर्णो निजांशेन पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥ ३४॥

शब्दार्थ

भुवः—जगत का; भार-अवताराय—भार कम करने के लिए; भगवान्—भगवान्; भूत-भावनः—सारे जीवों के नित्य हितैषी; अवतीर्णः—अवतरित हुए हैं; निज-अंशेन—अपने अंशस्वरूप समस्त साज-सामान सहित; पुण्य-श्रवण-कीर्तनः—उनकी पूजा श्रवण तथा कीर्तन से की जाती है जिससे मनुष्य पवित्र हो जाता है।

बलदेवजी भगवान् हैं। जो कोई उनका श्रवण और उनका कीर्तन करता है वह पवित्र हो जाता है। चूँकि वे समस्त जीवों के सतत हितैषी हैं अतएव वे अपने सारे साज-सामान सहित सारे जगत को शुद्ध करने तथा इसका भार कम करने के लिए अवतरित हुए हैं।

इत्यादिष्टोऽभिवन्द्याजं नृपः स्वपुरमागतः ।
त्यक्तं पुण्यजनत्रासाद्भ्रातृभिर्दिक्ष्ववस्थितैः ॥ ३५॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; आदिष्टः—ब्रह्माजी द्वारा आज्ञा दिये जाने पर; अभिवन्द्य—नमस्कार करके; अजम्—ब्रह्माजी को; नृपः—राजा; स्व-पुरम्—अपने आवास को; आगतः—लौट आया; त्यक्तम्—जो शून्य था; पुण्य-जन—उच्चतर जीवों का; त्रासात्—भय से; भ्रातृभिः—अपने भाइयों के द्वारा; दिक्षु—विभिन्न दिशाओं में; अवस्थितैः—रह रहे।

ब्रह्माजी से यह आदेश पाकर ककुद्मी ने उन्हें नमस्कार किया और अपने निवासस्थान को लौट गया। तब उसने देखा कि उसका आवास रिक्त है, उसके भाई तथा अन्य कुटुम्बी उसे छोड़कर चले गये हैं और यक्षों जैसे उच्चतर जीवों के भय से वे समस्त दिशाओं में रह रहे हैं।

सुतां दत्त्वानवद्याङ्गीं बलाय बलशालिने ।
बदर्याख्यं गतो राजा तप्तुं नारायणाश्रमम् ॥ ३६॥

शब्दार्थ

सुताम्—अपनी पुत्री को; दत्त्वा—देकर; अनवद्य-अङ्गीम्—सुगठित शरीर वाली; बलाय—बलदेव; बल-शालिने—अत्यन्त बलवान; बदरी-आख्यम्—बदरिकाश्रम नामक; गतः—चला गया; राजा—राजा; तप्तुम्—तपस्या करने के लिए; नारायण-आश्रमम्—नर-नारायण के स्थान को।

तत्पश्चात् राजा ने अपनी परम सुन्दरी पुत्री परम शक्तिशाली बलदेव को दान में दे दी और सांसारिक जीवन से विरक्त होकर वह नर-नारायण को प्रसन्न करने के लिए बदरिकाश्रम चला गया।

इस प्रकार *श्रीमद्भागवत* के नवम स्कन्ध के अन्तर्गत ''सुकन्या तथा च्यवन मुनि का विवाह'' नामक तीसरे अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।